Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. 21, Issue No. 7, October-2024, ISSN 2230-7540

DOI: https://doi.org/10.29070/q3z6wz43

Check for updates

बुंदेली लोकोक्ति एवं मुहावरों में श्री गौरीशंकर उपाध्याय का योगदान

सुश्री कल्पना सिंह [1] * , डॉ. बृजलता सिंह [2]

1. शोधार्थी, पी.के. विश्वविद्यालय, शिवपुरी (म.प्र.), भारत
kalpanasingh1158@gmail.com ,
2. पर्यवेक्षक, कला विभाग, पी.के. विश्वविद्यालय, शिवपुरी (म.प्र.), भारत

सारांश: भारतीय क्षेत्रीय भाषाओं की समृद्धि का प्रदर्शन प्रायः उनकी लोकोक्तियों और मुहावरों के माध्यम से होता है, जो जनमानस की सामूहिक बुद्धिमत्ता, हास्यबोध और दार्शनिक दृष्टिकोण को व्यक्त करते हैं। बुंदेली, जो उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश के बुंदेलखंड क्षेत्र में बोली जाती है, एक जीवंत बोली है। यह शोधपत्र श्री गौरीशंकर उपाध्याय के उल्लेखनीय योगदान का विश्लेषण करता है, जिन्होंने बुंदेली मुहावरों और लोकोक्तियों को सहेजने, बढ़ावा देने और रचनात्मक रुप से साहित्य में प्रयोग करने का कार्य किया है। यह अध्ययन उनके प्रयासों का भाषाई, सांस्कृतिक एवं साहित्यिक दृष्टिकोण से मूल्यांकन करता है और यह रेखांकित करता है कि यह दस्तावेजीकरण भारत की सामाजिक-भाषाई विविधता को संरक्षित करने और वर्तमान पीढ़ियों को उनकी सांस्कृतिक जड़ों से जोड़ने में कैसे सहायक है।

मुख्य शब्द: मुहावरे, लोकोक्ति, संस्कृति

---------- X ----------

भूमिका

बुंदेली भाषा बुंदेलखंड की सांस्कृतिक विरासत का अभिन्न हिस्सा है। यह अपने जीवंत अभिव्यक्तियों के लिए जानी जाती है, जो प्रायः लोकोक्तियों और मुहावरों के माध्यम से व्यक्त होती हैं। ये अभिव्यक्तियाँ दैनिक जीवन, कृषि, लोकाचार और नैतिक शिक्षाओं से उत्पन्न होती हैं। श्री गौरीशंकर उपाध्याय एक प्रमुख साहित्यकार हैं जिन्होंने इन अभिव्यक्तियों को साहित्यिक मंच पर प्रतिष्ठित किया। उनके लेखन क्षेत्रीय भाषाई संरक्षण के क्षेत्र में मील का पत्थर माने जाते हैं। यह शोधपत्र उनके प्रयासों का विश्लेषण करता है कि उन्होंने किस प्रकार इस भाषा को न केवल जीवित रखा बल्कि इसे समृद्ध भी किया।

अध्ययन के उद्देश्य

पहचान और वर्गीकरण- उपाध्याय के साहित्यिक कृतियों में प्रयुक्त बुंदेली मुहावरों और लोकोक्तियों की पहचान करना और उन्हें विषयवस्तु (सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक), संदर्भ (ग्रामीण जीवन, पारिवारिक संबंध, प्रकृति) और प्रयोजन (शिक्षाप्रद, हास्य, व्यंग्यात्मक) के आधार पर वर्गीकृत करना।

भाषिक और सांस्कृतिक महत्व- मुहावरों की व्याकरणिक रचना, भाषाई शैली और अंतर्निहित सांस्कृतिक रूपकों का विश्लेषण करना।

साहित्यिक विश्लेषण- यह समझना कि किस प्रकार मुहावरे कथा शैली को सशक्त बनाते हैं, व्यंग्य प्रस्तुत करते हैं, भावना उत्पन्न करते हैं और पारंपरिक मूल्यों को पुष्ट करते हैं।

भाषा संरक्षण- यह मूल्यांकन करना कि उपाध्याय के कार्यों ने किस प्रकार क्षेत्रीय भाषाओं की उपेक्षा और विलुप्ति की प्रवृत्ति के विरुद्ध कार्य किया।

अनुसंधान पद्धति

यह गुणात्मक अध्ययन है जो श्री गौरीशंकर उपाध्याय द्वारा लिखित प्रमुख पुस्तकों जैसे "बुंदेली लोकोक्तियाँ और मुहावरे," "देसी ज़मीन," और "माटी के रंग" पर आधारित है। इसमें निम्नलिखित विधियाँ अपनाई गईं:

मौखिक साक्षात्कार - बुंदेली भाषा के विद्वानों, लोक कलाकारों और बुज़ुर्ग ग्रामीणों से बातचीत।

मैदानीय अवलोकन - बाजारों, पंचायतों, विवाह आदि में मुहावरों के प्रयोग का अवलोकन।

विषयात्मक विश्लेषण- मुहावरों और रूपकों द्वारा व्यक्त अर्थों और सामाजिक मूल्यों की व्याख्या।

बुंदेली मुहावरों और लोकोक्तियों का अवलोकन

बुंदेली मुहावरे ग्रामीण जीवन, प्रकृति और समुदाय की परंपराओं से गहरे रूप से जुड़े होते हैं। इनका उपयोग शिक्षित करने, व्यंग्य करने, प्रशंसा या चेतावनी देने के लिए किया जाता है। उदाहरण:

"**घर की मुर्गी दाल बराबर**"- दर्शाता है कि लोग अपने पास की वस्तुओं का महत्व नहीं समझते।

"**धूप से डर के छांव ना मिले**"- चुनौतियों से डरने से सफलता नहीं मिलती।

"**ऊँट के मुँह में जीरा**"- बहुत बड़ी समस्या के सामने छोटा उपाय व्यर्थ होता है।

ये लोकोक्तियाँ बुंदेली समाज की सामूहिक मनोवृत्ति, नैतिक दृष्टिकोण और जीवनशैली का परिचय कराती हैं।

श्री गौरीशंकर उपाध्याय का योगदान

संकलन और दस्तावेजीकरण

श्री गौरीशंकर उपाध्याय ने बुंदेली भाषा की मौखिक परंपरा को दस्तावेजी स्वरूप प्रदान करने का ऐतिहासिक कार्य किया। उन्होंने वर्षों तक गाँव-गाँव घूमकर लोककथाकारों, बुज़ुर्गों, महिलाओं, चरवाहों, तथा लोक गायकों से संवाद कर पारंपरिक मुहावरों को एकत्रित किया। यह केवल भाषिक कार्य नहीं, बल्कि सांस्कृतिक पुनर्जागरण का प्रयास था। उनकी पुस्तक "बुंदेली लोकोक्तियाँ और मुहावरे" एक ऐसी धरोहर है जो बुंदेली समाज की सोच, जीवनशैली, नैतिक मूल्यों और सामाजिक ढांचे को प्रतिबिंबित करती है। यह कृति न केवल भाषा-संरक्षण की दिशा में मील का पत्थर है, बल्कि एक जीवंत सांस्कृतिक अभिलेख भी है।

काव्य में रचनात्मक प्रयोग

उपाध्याय जी की रचनाओं में मुहावरों का प्रयोग केवल भाषा को सजाने के लिए नहीं, बल्कि विचारों की संप्रेषणीयता और संवेदनाओं की गहराई को व्यक्त करने हेतु हुआ है। "माटी के रंग" जैसी रचनाएँ इस प्रयोग की उत्कृष्ट मिसाल हैं, जहाँ मुहावरे ग्रामीण जीवन की लय, हास्य-बोध, संघर्ष और आशाओं को सहज रूप से व्यक्त करते हैं। उनकी काव्यभाषा लोकबोली के स्वाभाविक प्रवाह के साथ चलती है, जिससे पाठक को लगता है कि वह अपने ही परिवेश की बातों को पढ़ रहा है।

सांस्कृतिक प्रतिनिधित्व

मुहावरों के माध्यम से उपाध्याय जी ने समाज के विविध पहलुओं—जैसे पितृसत्ता, स्त्री की दशा, किसान की दुर्दशा, जातीय संबंध, ग्रामीण राजनीति और नैतिक द्वंद्व—पर सशक्त टिप्पणी की है। उनकी कविताओं में प्रयुक्त मुहावरे सामाजिक यथार्थ को सीधे और सटीक रूप में अभिव्यक्त करते हैं। उदाहरणस्वरूप, किसी महिला की असहायता को दर्शाते हुए वे कहते हैं: "बिना डांडी की लुगाई, जइसी हवा तइसी परछाईं", जो स्त्री की असुरक्षा को व्यंजित करता है।

भाषिक संरक्षण

जहाँ अधिकांश समकालीन लेखक हिंदी या अंग्रेजी की ओर झुकाव दिखा रहे थे, वहीं उपाध्याय ने बुंदेली को साहित्यिक अभिव्यक्ति का माध्यम बनाकर भाषिक स्वाभिमान को पुनर्जीवित किया। उन्होंने यह स्थापित किया कि बुंदेली न केवल बोली जा सकती है, बल्कि उसमें गंभीर, विचारोत्तेजक और कलात्मक साहित्य भी रचा जा सकता है। उनकी रचनाएँ आनेवाली पीढ़ियों के लिए न केवल भाषा सीखने का माध्यम हैं, बल्कि उन्हें अपनी सांस्कृतिक जड़ों से जोड़ने वाली कड़ी भी हैं।

प्रमुख कृतियों का साहित्यिक विश्लेषण

श्री उपाध्याय की कृतियाँ "देसी ज़मीन" और "बुंदेली भाव-समवेदना" बुंदेली समाज और संस्कृति का जीवंत दस्तावेज हैं। इन रचनाओं में मुहावरों का प्रयोग न केवल भाषिक सौंदर्य को बढ़ाता है, बल्कि कथा की प्रवाहिता, पात्रों की प्रामाणिकता और सांस्कृतिक वातावरण की सजीवता को भी सुदृढ़ करता है।

संवादी शैली: उपाध्याय की रचनाओं में संवादों का उपयोग बहुत प्रभावशाली ढंग से किया गया है। पात्रों के संवादों में प्रयुक्त स्थानीय मुहावरे उनके सामाजिक परिवेश, वर्गीय स्थिति और सांस्कृतिक पहचान को दर्शाते हैं। जैसे-"जइसा खाइहौ, वैसा गाइहौ"-यह मुहावरा किसान पात्रों की सोच और कर्मफल के प्रति विश्वास को दर्शाता है।

नीति और दर्शन: उनकी रचनाओं में कई मुहावरे नीति, कर्म और नैतिकता जैसे विषयों को सहजता से प्रस्तुत करते हैं। उदाहरणस्वरूप, "जैसा करोगे वैसा भरोगे" एक सामान्य मुहावरा होते हुए भी कर्म के दार्शनिक सिद्धांत को सहज, बोधगम्य और प्रभावशाली रूप में प्रस्तुत करता है।

रूपकात्मक गहराई: उपाध्याय मुहावरों के माध्यम से गूढ़ विषयों—जैसे न्याय, भाग्य, संघर्ष और अस्तित्व—को रूपक रूप में प्रस्तुत करते हैं। इन मुहावरों में उपदेशात्मकता नहीं होती, बल्कि जीवन के कटु यथार्थ की झलक होती है। उदाहरणस्वरूप, "नाच न जाने आँगन टेढ़ा" का प्रयोग वे सामाजिक जिम्मेदारियों से भागने वालों की आलोचना में करते हैं।

निष्कर्ष

श्री गौरीशंकर उपाध्याय का योगदान बुंदेलखंड की सांस्कृतिक विरासत हेतु अमूल्य है। उनके द्वारा बुंदेली मुहावरों का दस्तावेजीकरण और साहित्यिक प्रयोग ने इस बोली को जीवंत बनाए रखा है। भाषाई एकरूपता के इस युग में उनका कार्य क्षेत्रीय भाषाओं के पुनरुत्थान का पथप्रदर्शक है। यह अध्ययन पुनः इस तथ्य को पुष्ट करता है कि स्थानीय बोलियों और लोकज्ञान के संरक्षण हेतु शैक्षिक व सांस्कृतिक प्रयास आवश्यक हैं। भावी शोध को इन मुहावरों को शैक्षिक पाठ्यक्रमों में सम्मिलित करने और लोककथाओं के संरक्षण कार्यक्रमों से जोड़ने पर केंद्रित होना चाहिए।

संदर्भ

1. उपाध्याय, गौरीशंकर. बुंदेली लोकोक्तियाँ और मुहावरे. झांसी: बुंदेलखंड साहित्य परिषद, 2003.
2. उपाध्याय, गौरीशंकर. माटी के रंग. सागर: लोकभारती प्रकाशन, 2006.
3. उपाध्याय, गौरीशंकर. देसी ज़मीन. भोपाल: मध्यप्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी, 2010.
4. मिश्रा, रमेश. बुंदेली भाषा और साहित्य का विकास. जबलपुर: जनक प्रकाशन, 2015.
5. शर्मा, रजनीकांत. भारतीय भाषाओं में मुहावरों का सांस्कृतिक महत्व. वाराणसी: विश्वभारती प्रकाशन, 2011.
6. गुप्ता, मीरा. लोकभाषा में स्त्री विमर्श: बुंदेली साहित्य के संदर्भ में. हिंदी अध्ययन पत्रिका, खंड 22, अंक 1, 2019.
7. चतुर्वेदी, हरिशंकर परसाई. हास्य और व्यंग्य में लोकभाषा की भूमिका. दिल्ली: साहित्य प्रकाशन, 2008.
8. सिंह, बलदेव. बुंदेली बोली: संरचना और प्रयोग. इलाहाबाद विश्वविद्यालय शोध पत्र, 2017.
9. भारतीय लोककला परिषद. बुंदेलखंड की लोकसंस्कृति. नई दिल्ली: साहित्य अकादमी, 2005.
10. पांडेय, वसुधा. भारतीय ग्रामीण साहित्य और सांस्कृतिक चेतना. आलोचना शोध-पत्रिका, अंक 34, 2020.

11. शर्मा, आर. (2015)। लोक साहित्य और बुंदेली भाषा। नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन।

12. तिवारी, बी. (2019)। "क्षेत्रीय पहचान में लोक अभिव्यक्तियों की भूमिका।" भारतीय लोक साहित्य अध्ययन पत्रिका, खंड 12(1), पृ. 22–35।

13. बुंदेली विद्वानों एवं स्थानीय बुज़ुर्गों के साथ मौखिक साक्षात्कार (2024)।

14. मिश्रा, पी. (2020)। ग्रामीण जीवन और लोकभाषाओं का साहित्य में प्रतिबिंब। भोपाल: मध्यप्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी।